International Journal of Applied Research 2017; 3(12): 624-626

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2017; 3(12): 624-626
www.allresearchjournal.com
Received: 05-10-2017
Accepted: 10-11-2017

डॉ. रामफूल जाट
व्याख्याता, समाजशास्त्र,
राजकीय महाविद्यालय, निवाई,
राजस्थान, भारत

Corresponding Author:
डॉ. रामफूल जाट
व्याख्याता, समाजशास्त्र,
राजकीय महाविद्यालय, निवाई,
राजस्थान, भारत

परिवार एवं विवाह संस्था पर वैश्वीकरण का प्रभाव एवं युवा दृष्टिकोण

डॉ. रामफूल जाट

सारांश
पारिवारिक व्यवस्था को एक आर्थिक सामाजिक प्रावधान के रूप में आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिए, भावनात्मक आधार के रूप में एक प्रभावशाली समूह के रूप में और सामाजिक अनुशासन के एक साधन के रूप में देखा जा सकता है। भारतीय परिवार व्यवस्था की एक महत्वपूर्ण विशेषता संयुक्त परिवार प्रणाली के अस्तित्व को वर्तमान में युवा वर्ग संरचनात्मक दृष्टि से चुनौती देने लगा है। प्राकार्यात्मक दृष्टि से संयुक्तता स्वीकार्य है। परम्परा प्रधान समाज में विवाह एक ऐसी धार्मिक और सामाजिक संस्था है जो किसी भी महिला और पुरूष को एक साथ जीवन व्यतीत करने का अधिकार देने के साथ दोनों को कुछ महत्वपूर्ण दायित्व भी प्रदान करती है। जैसे–जैसे वैश्वीकरण की प्रक्रिया आगे बड़ी विवाह विभिन्न परिवर्तनों से गुजरा है। जैसे प्रेम विवाह, अन्तजातीय विवाह, अनुलोम प्रतिलोम विवाह का प्रचलन बड़ा हैं। यहां तक कि इससे जुड़े मूल्यों में भी अभूतपूर्व बदलाव आया है। युवा आज विवाह को समझौते के आधार पर न चलाकर स्वेच्छा से तलाक लेना बेहतर मानता हैं। वैश्विकरण के परिणामस्वरूप आर्थिक गतिशीलता, सांस्कृतिक हस्तान्तरण, लिव इन रिलेशनशिप, नये रोजगार के अवसर, युवा पीढ़ी गतिशीलता व पारिवारिक संबंधों को कमजोर किया है। उच्च शिक्षित पारिवारिक हित के बजाय स्वहित को प्रोत्साहन, महिलाओं की आर्थिक स्वतन्त्रता। आई.टी. से संबंधित नौकरियों ने परिवारों, महिलाओं के दोहरे दायित्वों का बढ़ाया है वहीं युवा वर्ग द्वारा परिवार एवं विवाह ने परम्परागत प्रतिमानों को चुनौती मिल रही है।

कूटशब्द : परिवार, विवाह, वैश्वीकरण, सामाजिक प्रतिमान, तलाक, युवा वर्ग, सामाजिक परिवर्तन

प्रस्तावना
सभी समाजों में युवा एक गतिशील एवं परिवर्तनशील शक्ति है। युवा एक ऐसा वर्ग समूह हैं जिसकी कोई सर्वसम्मत परिभाषा नहीं दी जा सकती हैं। जैविक तौर पर एक निश्चित आयु वर्ग समूह को युवा वर्ग कहा जा सकता हैं, परंतु अलग–अलग समाजों में युवाओं के लिए अलग–अलग आयु वर्ग तय किए गए हैं। अनेक देशों में 15–24 आयु वर्ग के लोगों को युवा माना जाता है। यूनीसेफ द्वारा किए गए अध्ययनों द्वारा युवाओं की आयु श्रेणी 11 से 12 वर्ष निर्धारित की गई है। यूनेस्को के अनेक सहयोगकर्ताओं एवं सहभागियों जिन्होंने "प्रादेशिक युवा सम्मेलनों'' में भाग लिया वे सहमत हैं कि युवाओं की परिभाषा में 30–35 आयु वर्ग को शामिल किया जा सकता है।[1]

मानसिक स्तर पर देखने पर युवाओं में कुछ सार्वभौमिक विशेषताएं देखने को मिलती हैं। लगभग 2330 वर्ष पूर्व विश्व विख्यात ग्रीक दार्शनिक अरस्तू ने लिखा था कि युवा वह है जो अपनी इच्छाओं के अनुसार कार्य करता है। शारीरिक तथा यौन इच्छाओं पर युवा कोई नियन्त्रण नहीं रखते हैं। परिवर्तन–उन्मुख, भावुकता तथा संवदेनशीला तथा इच्छाओं के प्रति दासता आदि युवाओं की अन्य विशेषताऐं अरस्तू ने बताई हैं। वे महत्वाकांक्षी एवं जीत के भूखे होते हैं। दानशीलता में विश्वास करते हैं, संग्रहण एवं कंजूसी नहीं दिखाते हैं। वे भरोसा करते है, क्योंकि उन्हे अभी जीवन ने धोखा नहीं दिया है। आशावादी, आकांक्षी होते है। युवा अपने मित्रों एवं संबंधो के प्रति समर्पित होते है। इस प्रकार अरस्तू ने युवाओं की लगभग सभी विशेषताओं को सार रूप में प्रस्तुत किया है। युवा वर्ग ऐसा ऐसा समूह हैं जो सामाजिक परिवर्तन में सबसे महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता हैं। आज मनोवैज्ञानिक अनेक अवधारणाओं का प्रयोग युवाओं को परिभाषित करने के लिए करते है। पहचान का संकट और भावुकता युवाओं मुख्य की विशेषता है। युवावस्था मानव जीवन की एक विशिष्ट अवस्था है जिसमे व्यक्ति भावनात्मक एवं सामाजिक रूप से आने वाली वयस्क अवस्था के लिए तैयार होता है लेकिन युवाओं के व्यक्तित्व को समाज विशेष की संस्कृति एवं समय/काल अवश्य प्रभावित करता है और युवाओं के आधारभूत लक्षण सभी संस्कृतियों एवं समाजों में समान ही पाए जाते है। क्योंकि अलग–अलग समाज में युवाओं की श्रेणियां अलग–अलग है।

एमॉरी विश्वविद्यालय के प्रोफेसर मार्क बॉयेलाईन ने अपनी पुस्तक 'द डम्बेस्ट जेनरेशन : हाउ द डिजीटल ऐज स्टुपिफाइज यंग अमरीकन्स एंड जिओपार्डाइजेज अवर फ्यूचर अमेरिका की तीस वर्ष तक की वर्तमान पीढ़ी के बौद्धिक खालीपन को उजागर करती हैं। इस खालीपन की परिधि में धीरे–धीरे संपूर्ण युवा वर्ग आता जा रहा हैं। मार्क बेबाकी का मत हैं कि सायबर कल्चर युवाओं को कुछ भी नहीं जानने वालों में बदलती जा रही हैं। इस कल्चर से नई पीढ़ी का समझदार होना अवरुद्ध हो रहा है। वे इस पुस्तक में प्रश्न करते हैं कि क्या ऐसा युवा अपने देश की राजनीतिक और आर्थिक श्रेष्ठता कायम रख सकता हैं? वैसे तो पॉप कल्चर और युवा पीढी पर उसके प्रभावों को लेकर काफी समय से बहस हो रही हैं। वर्तमान डिजिटल युग जब शुरू हुआ तो बहुतों ने यह आस बांधी थी कि व्हॉटस्अप, फेसबुक, इंटरनेट, ई–मेल, ब्लॉग्ज, इंटरएक्टिव वीडियो गेम्स वगैरह के कारण एक नई, अधिक जागरूक और बौद्धिक रूप से परिष्कृत पीढ़ी तैयार होगी। इंर्फोमेशन सुपर हाइवे और नॉलेज इकोनॉमी जैसे नए शब्द हमारी जिंदगी में आए और उम्मीद की जाने लगी कि नई तकनीक के प्रयोग से दक्ष युवा अपने से पिछली पीढ़ी से बेहतर होगें लेकिन दुर्भाग्य कि यह आस आस ही रही। ताजा रिपोर्ट्स बताती हैं, अमेरिका की नई पीढी के ज्यादातर लोग न तो साहित्य पढते है, न म्यूजियम्स जाते हैं और न वोट देते हैं। इन्हीं सारे कारणों से मार्क बॉयेर्लाइन ने उन युवाओं को, जो अभी हाई स्कूल में हैं, द डम्बेस्ट जेनरेशन का नाम दिया हैं। बॉयेर्लाइन ने जो तथ्य दिए हैं वे बहुत अच्छी तरह यह स्थापित करते हैं कि आज का युवा डिजीटल मीडिया के माध्यम से और ज्यादा आत्मकेन्द्रित होता जा रहा हैं। युवा मात्र स्वयं के लिए काम कर रहा हैं। युवा परिस्थितियों को दूर करने के बजाए, परिस्थितियों से दूर भाग रहा हैं। मार्क इस मिथ को भी तोडते हैं कि इंटरनेट में बढ़ती दिलचस्पी ने युवाओं के बुद्ध बक्सा मोह को कम किया हैं । मार्क बताते हैं कि 1981 से 2003 तक आते–आते पंद्रह से सत्रह वर्ष वाले किशोरों का पढ़ने का वक्त अठारह मिनट से घटकर सात मिनट रह गया है।

इससे आगे बढ़कर मार्क का यह भी मत हैं कि 12 वीं कक्षा के 46.00 प्रतिशत विद्यार्थी विज्ञान में बेसिक स्तर को भी नहीं छू पाते हैं, एडवांस्ड स्तर तक तो महज 2.00 प्रतिशत ही पहुँचते हैं। यही हाल उनकी राजनीतिक समझ का भी हैं। हाईस्कूल के महज 26.00 प्रतिशत बच्चे नागरिक शास्त्र में सामान्य स्तर के हैं। नेशनल असेसमेंट ऑफ एजुकेशन प्रोग्रेस की रिपोर्ट के अनुसार, बारहवीं कक्षा के बच्चों में 1992 से 2005 के बीच पढने की आदत में भी भारी कमी आई हैं। इस कक्षा के केवल 24 प्रतिशत बच्चे ही ठीक–ठाक वर्तनी और व्याकरण वाला काम चलाऊ गद्य लिख सकने में समर्थ हैं। यही हाल उनकी मौखिक अभिव्यक्ति का भी हैं। साथ ही युवाओं की हस्तलिपि भी बहुत खराब हो रही है।[2]

उपर्युक्त तथ्य भारतीय युवा वर्ग पर भी लागू हो रहा हैं। भारतीय युवा भी प्राचीन पुराणों का विशेष ज्ञान नहीं रखते हैं साथ ही कपड़ों के फैशन की तरह विचारों का भी फैशन युवाओं में बढ रहा हैं जो समय के साथ प्रचलित होता हैं तथा बाद में समाप्त भी हो जाता हैं। भारतीय फिल्में इस फैशन का लाभ उठा रही हैं, रंग दे बसंती का डीजे और लगे रहो मुन्नाभाई की गांधीगिरी फैशन की तरह प्रचलित हुई क्योंकि इनमें इनका फिल्मांकन एक फैशन शो की तरह ही किया गया। युवा उसी चीज की तरफ आकर्षित हो रहा है जो उसकी वर्तमान दिखावे की भौतिक संस्कृति में समाहित हो सकती हों, और इस संस्कृति में 'स्वदेस का मोहन' शामिल नहीं हो पाया। अब बढती भौतिकता युवाओं में भी समाहित हो रही हैं। इससे युवा प्रेम की अभौतिकता में भी मात्र भौतिकता खोजने में लगा हुआ हैं। उसका हर कदम सोच–विचार के साथ उठता हैं, वह हर काम लाभ–हानि के परिप्रेक्ष्य में सोच कर करता हैं। तीव्र गति से कार्य करने की आदत युवाओं में आ गई हैं, इंटरनेट ने इस गति को और तेज कर दिया है। इससे युवाओं में सब्र खोता जा रहा हैं, वह प्रत्येक काम का हाथों हाथ प्रतिफल पा लेना चाहते हैं। इसके साथ ही आज के युवा कठिनाईयों से दूर भाग रहा हैं क्योंकि कठिनाइयों को समाप्त करने या उनसे संघर्ष करने में वह अपना समय नहीं गवांना चाहता। उसे अपने लिए कुछ करना हैं, मात्र स्वयं के लिए।

वैश्वीकरण की प्रक्रिया से भौतिक संस्कृति अत्यधिक तीव्र गति से प्रसारित हो रही हैं तथा इस के प्रभाव युवा वर्ग अधिक संपर्क में आ रहा है। भौतिक संस्कृति के तीव्र प्रभाव के कारण युवा संस्कृति का संतुलन बिगड़ रहा हैं। समकालीन में युवा संस्कृति में अभौतिक संस्कृति के तत्व कम तथा भौतिक संस्कृति के तत्व बढ़ते जा रहे हैं। इस सांस्कृतिक असंतुलन के कारण युवाओं में अकेलापन बढता जा रहा हैं। इस अकेलेपन से अवसाद तथा आत्महत्या जैसी समस्याएँ भी युवाओं में तीव्र गति से बढ़ रही हैं। बड़ते वैश्वीकरण प्रक्रिया का प्रभाव विवाह तथा परिवार पर भी स्पष्ट रूप से देखने को मिल रहा हैं। वैश्वीकरण से परिवारों में बिखराव बढ़ रहा हैं। परिवार के सदस्य अपने–अपने कार्यो के कारण अलग–अलग स्थानो, राज्यों तथा राष्ट्रों में रह रहे हैं। वह वर्ष में एक या दो बार ही आपस में मिल पाते हैं। इसी प्रकार वैश्वीकरण के कारण विवाह के क्षेत्र भी विस्तृत होते जा रहे हैं। दो अलग–अलग राष्ट्रों के लोग आपस में विवाह करने लगे हैं। युवाओं में स्वयं की पसंद से विवाह करने का चलन बढ़ रहा हैं, चाहे उनके विवाह में परिवार की सहमति हो या न हो। इस तरह के विवाह जिसमें जिसमें मात्र विवाह करने वाले जोडे का प्रेम को ही आधार हो प्रेम विवाह की श्रेणी में आता हैं, इस प्रकार के विवाह में जाति, धर्म तथा क्षेत्र विवाह का आधार नहीं रह जाते हैं। भारतीय संस्कृति में पहले प्रेम को विवाह का आधार नहीं माना जाता था, ऐसा दो कारणों से होता हैं –

- पहला तो यह कि भारतीय समाज में पति–पत्नी संयुक्त परिवारों में रहते हैं। इस स्थिति में पति–पत्नी के आपसी प्रेम की अपेक्षा यह अधिक महत्त्वपूर्ण माना जाता हैं कि विवाहित व्यक्ति परिवार में किस प्रकार घुलमिल सकता हैं।
- दूसरा कारण यह हो सकता हैं कि पति और पत्नी में से कोई एक दूसरे की अपेक्षा घर के लिए अधिक कार्य करता हैं या अधिक धन कमाता हैं। यदि पति या पत्नी में से कोई एक दूसरे पर या उसके किसी संबंधी पर अत्यधिक निर्भर हो तो इस अवस्था में भी विवाह के लिए प्रेम को आधार नहीं बनाया जा सकता।

वर्तमान में प्रेम को आधार न बनाने के दोनों ही कारण शिथिल पड रहे हैं। इसलिए वर्तमान में प्रेम विवाह अधिक बढ़ रहें हैं। वर्तमान में संताने संयुक्त परिवार में रहने के लिए इतनी बाध्य नहीं रही, जितना पहले के समय में थी । पहले आय अर्जन का काम संतान पिता से ही सीखती थी, पिता व परिवार के अन्य सदस्य ही उसके गुरू होते थे इस स्थिति में वह परिवार के साथ ही संयुक्त आय अर्जित करता था। उसकी स्वयं की निजी संपत्ति नहीं होती थी, इसलिए वह परिवार पर निर्भर था और उसी से विवाह हेतु बाध्य भी था जिसे परिवारजन उसके लिए चुनते थे।

समकालीन समाज में स्थिति परिवर्तित हो गई हैं, समाज में बढ़ती सावयविता ने आय अर्जन के कई नये क्षेत्र प्रस्तुत कर दिए हैं। व्यक्ति अब परिवार पर निर्भर नहीं रहा इसलिए प्रेम विवाह में उसे उस स्थिति में बाधा नहीं पहुँचती, जब परिवारजन उसे निष्कासित कर दें। इसका लाभ आज की पीढी को यह भी मिल रहा हैं कि वह परिवार न छोडे इसलिए परिवारजनों से उन्हें प्रेम विवाह की स्वीकृति भी मिल रहीं है। अतः आर्थिक आत्मनिर्भरता के कारण पति–पत्नी अपने किसी संबंधी पर निर्भर भी नहीं रहें तथा वे एक–दूसरे पर भी निर्भर नहीं रहें। यह आत्मनिर्भरता प्रेम–विवाह को बढावा दे रही हैं जो भारत में कई समस्याओं को समाप्त कर

सकता हैं। यह बहुत आगे के समय की बात हैं परंतु प्रेम विवाह के कुछ प्रभाव समाज में शीघ्र ही नजर आने लगे हैं।

पारिवारिक रूप से आयोजित विवाह आज भी प्रेम विवाह से ऊँची स्थिति पर रखा जाता है और प्रेम विवाह को परिवार की स्वीकृति प्राप्त हो तो भी उसे भी अभी तक सम्मानीय नहीं माना जाता। ऐसी स्थिति में प्रेम विवाह करने वाले दम्पत्ति पारिवारिक वैवाहिक सुरक्षा से वंचित हो जाते है जबकि आयोजित विवाह करने वाले दम्पत्ति हर वक्त सुरक्षा के घेरे में घिरे रहते हैं। ऐसे दम्पत्तियों के वैवाहिक जीवन में यदि तनाव आता हैं तो दोनों पक्षों के परिवारजन उसे समाप्त करने का प्रयास करते हैय परंतु प्रेम विवाह करने वाले दम्पत्तियों में इस प्रयास का अभाव होता हैं। इससे शीघ्र ही तलाक की स्थिति आ जाती हैं।

प्रेम विवाह से समाज में परम्परागत लोक संस्कृति का भी ह्रास हो रहा हैं। विवाह में मात्र प्रेम को आधार मानने से विवाह के बाद कोई लडकी एक ऐसे परिवार में आ जाती है, जिसमें उससे भिन्न धर्म, जाति, रीति–रिवाज, परम्पराएँ तथा प्रथाएँ हैं। यह भिन्नता भी उसे परिवार से जुडने में बाधा उत्पन्न करती हैं। इससे सास–बहू का संबंध प्रभावित होता हैं। सास, जो परिवार की विशिष्ट परम्पराएँ बहू को स्थानांतरित करती हैं, उक्त स्थिति में उस स्थानांतरण की संभावनाएँ कम हो जाती हैं। वर्तमान स्थिति का अवलोकन करे तो पता चलता हैं कि परिवारों में लोक–गीत, लोक–परम्पराएँ यहाँ तक कि पाक कला की विरासत समाप्त हो रही हैं। सास–बहू के बीच भी घनिष्ठता कम होती जा रही हैं। इसका अभिप्राय यह हैं कि उनके बीच की निर्भरता समाप्त हो रही हैं, यहाँ तक कि शिशु पालन की निर्भरता से भी बहुएँ स्वतंत्र हो रही हैं। जो बातें और ज्ञान सास मौखिक रूप से बहू को देती थी वह ज्ञान बाजारवाद के कारण बाजार में बिखरा पड़ा हैं। आज सास अपनी बहू के साथ व्यवस्था बैठाती हैं क्योंकि उसे अपने पुत्र के चले जाने का भय हैं, जबकि पहले स्थिति इसके विपरीत थी।

ऐसा भी नहीं हैं कि प्रेम विवाह का एक मात्र कारण बढती आत्मनिर्भरता ही है, इसका एक कारण कानून भी हैं। विवाह के मामलों में कानूनी प्रावधान होना भी इसका एक कारण रहा। विवाह ही नहीं सम्पत्ति अधिकार कानूनों ने भी कही न कहीं प्रेम विवाह को प्रोत्साहित किया हैं। हाल ही में सरकार भी जातीयता समाप्त करने की पहल कर रही है, जिससे उसने अंतर्जातीय विवाह करने वाले दम्पत्ति को 5 लाख की आर्थिक सहायता दे रही हैं। यह प्रावधान भी आज के समाज में प्रेम को प्रोत्साहित कर रहे हैं। आज अनेक समाजों में आयोजित विवाहों की प्रथा समाप्त होती जा रही है और लोगों को अपना जीवन साथी चुनने की अधिक स्वतंत्रतता मिलने लगी हैं। यही स्थिति भारतीय समाज में भी बढ रही हैं।

प्रेम विवाह के साथ तलाक की दर भी बढ रही हैं। ऐसा भी नहीं हैं कि तलाक प्रेम आधारित विवाहों में ही होता हैं। तलाक में वृद्धि का कारण तलाक सरलता से मिलना भी हैं। अनेक देशों में 1960 के दशक के अंत तथा 1970 के दशक में तलाक के कानून सरल कर दिए गए थे तथा इससे तलाक की दर में तेजी भी आई। प्रश्न उठता है कि इतने सारे देशों में एक साथ तलाक के कानून सरल बनाए ही क्यों गए? क्या इससे पहले विवाह के प्रति दृष्टिकोण में परिवर्तन आ गया था?[4] इन प्रश्नों का जवाब यह हो सकता हैं कि आयोजित विवाहों को जबरन बनाए रखने की क्षमता लोगों में घट गई थी, यह समय वैश्विक सामाजिक परिवर्तन का था जिसने कानून में भी परिवर्तन कर दिया। इससे लोगों ने विवाह को जबरदस्ती बनाए रखने कि बजाए उसे समाप्त करना ही बेहतर समझने लगे। स्पष्ट हैं कि तलाक लिए जाने के कारण प्रेम विवाहों में नहीं वरन् आयोजित विवाहों में भी तलाक लिए जाने के सभी कारण ये बस फर्क इतना हैं कि प्रेम विवाह में उसे न रोक पाने के कारण कम हैं जबकि आयोजित विवाह में अधिक।

वर्तमान में दोनों ही तरह के विवाहों में तलाक हो रहे हैं इसका एक कारण फिर से कानून को कहा जा सकता हैं पूर्व काल की अपेक्षा आज उन स्त्रियों की संख्या कहीं अधिक हो चुकी हैं जो राज्य की सहायता से, पति के बिना भी काम चला सकती है। यह स्थिति स्वीडन में भलीभांति लागू होती हैं, जहाँ अविवाहित तथा तलाक प्राप्त माताओं को सामाजिक सहायता तथा शिशुओं को जन्म देने और देखभाल के लिए भत्ते तथा शिक्षा प्राप्त करने के लिए छुट्टी मिलती हैं।

आगे बढे तो ज्ञात होता हैं कि तलाक से केवल माता या पिता वाले परिवार अधिक बढ़ रहें हैं। पाश्चात्य देशों में तो पिछले कुछ वर्षों में ऐसे परिवारों की संख्या में बहुत तेजी से वृद्धि हुई हैं। जिनमे से लगभग 90 प्रतिशत परिवार केवल स्त्रियों के हैं। आज संयुक्त राज्य में ऐसे परिवारों की संख्या सर्वाधिक हैं। तलाक सरलता से मिल जाना तथा स्त्रियों को राज्य से सहायता मिलना इन दो कारणों के अतिरिक्त एक कारण और हैं जिससे केवल माता तथा पिता वाले परिवारों में वृद्धि हो रही है, वह कारण हैं पुनर्विवाह न करना।[5] यद्यपि अनेक माता–पिता स्पष्टतः अकेले रहने का निर्णय ले लेते हैं किंतु अनेक बार वे उचित साथी मिलने पर संभवतः विवाह करने को तैयार हो सकते हैं। कुछ देशों में तथा अनेक बार एक ही देश के विभिन्न मानवजाति समूह के लोगों में स्त्रियों की अपेक्षा पुरूषों की संख्या कम होती है तथा अनेक बार पुरूषों में से कई लोगों की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं होती। डैनियल लियटर तथा उनके सहयोगियों द्वारा किए गए एक अध्ययन से ज्ञात होता हैं कि 21–28 वर्ष तक की 100 अफ्रीकी अमेरिकी स्त्रियों के लिए 80 से भी कम अफ्रीकी अमेरिकी पुरुष हैं। यदि हम केवल उन पुरुषों की गिनती करे जो पूर्व या अंशकालिक रूप से काम करते है, तो यह संख्या घटकर 50 पुरूष प्रति 100 स्त्रियों से कभी कम रह जाती हैं। इस प्रकार यह एक ठोस कारण सामने आता हैं कि उन स्थानों पर केवल माता या पिता वाले परिवार पाए जाने की संभावना अधिक होती हैं, जहाँ विवाह के लिए उपयुक्त पात्र कठिनाई से मिलते हैं, विशेषकर कामकाजी पात्र।[6]

कुछ भी हो, वाणिज्यिक या कानूनी यह विवाह को कहीं न कहीं प्रभावित कर समाज में परिवर्तन कर रहे हैं। बाजार की अर्थव्यवस्था होने पर अन्य अनेक संभावनाएँ उत्पन्न हो जाती है; वस्तुएँ तथा सेवाएँ खरीदी तथा बेची जा सकती हैं तथा उन कार्यों को करने का उत्तरदायित्व सरकार ले सकती हैं, जो संबंधी तथा परिवार वालों पर छोड़े जाते हैं। कुछ लोगों के लिए विवाह, तलाक तथा एक माता या पिता वाले परिवार रखने का विकल्प बना रहेगा चाहे स्वेच्छा से; चाहे विवशता के कारण।[7]

संदर्भ

1. यूनेस्को रिपोर्ट : यूथ इन द 1980 (1981)
2. मार्क बॉयेलाईन 'द डम्बेस्ट जेनरेशनः हाउ द डिजीटल ऐज स्टुपिफाइग यंग अमरीकन्स एंड जिओपार्डाइजेज अवर फ्यूचर', 2008.
3. फीस्चर, एफ., एंड जेन्कोबेक, आर.: ए क्रॉस कल्चरल पर्सपेक्टिव ऑन रोमेंटिक लव, प्रेन्सटाइन हॉल, 1992.
4. बर्नस्, एलीसा; स्कॉट, कैच; मदर हैडेड फैमिलिज एंड व्हाय दे हैव इंक्रीज्ड, हिलसैडल, एन.जे., 1994
5. बर्नस्, एलीसा; स्कॉट, कैच; वहीं
6. डेनियल, टी. लिटचर; : रेस एंड द रिट्रीट फार्म मैरिजः ए शोर्टएज ऑफ मैरिजेबल मैन? ; अमेरिकन सोश्योलॉजीकल रिव्यू, 57 (1992): 781–99
7. पॉपेनॉय, डेविड. : डिस्र्टबिंग द नेस्ट, एल्डाइन, न्यूर्याक, 1998.